6

शांति की शिक्षा और कक्षायी अभ्यास

ऊषा शर्मा*

पाठ्यचर्या के विभिन्न क्षेत्रों एवं उनसे संबद्ध कक्षायी अभ्यासों के माध्यम से शांति की शिक्षा का कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकता है। कक्षायी अभ्यासों में शांति की शिक्षा की भरपूर गुंजाइश होती है जहाँ शिक्षक, शिक्षार्थी, और संपूर्ण शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया मिलकर इस दिशा में कार्य कर सकते हैं। विषय क्षेत्रों से जुड़े कक्षायी अभ्यास किस प्रकार शांति की शिक्षा को बढ़ावा देते हैं यही प्रस्तुत लेख का विषय है।

व्यक्ति का जीवन उसकी इच्छा, कर्म और विचारों की त्रिवेणी में प्रवाहित होता है। व्यक्ति के कार्यों का आधार सत्य और अहिंसा, धैर्य और सहिष्णुता, मृदुता और करुणा, स्वालंबन और कर्त्तव्यनिष्ठा आदि वैयक्तिक मूल्य होने चाहिए। शैक्षिक प्रक्रिया में व्यक्ति में वैचारिक भावात्मक एवं कर्म संबंधी परिवर्तन अपेक्षित हैं जिससे व्यक्ति श्रेयस्कर जीवन व्यतीत कर समरस समाज का निर्माण कर सके। शैक्षिक प्रक्रिया में श्रेयस्कर मूल्यों का संप्रेषण अपेक्षित है और 'शांति' अपने आप में अनिवार्य मूल्य है जिसका विकास शिक्षा-प्रक्रिया का एक मुख्य लक्ष्य है। यह भी सत्य है कि प्रकृति और मनुष्य एक-दूसरे से अप्रत्याशित रूप से घुले-मिले हैं। प्रकृति की गोद में मनुष्य जन्म लेता है, प्रकृति की गोद में उसका पोषण होता है और प्रकृति की गोद में ही मनुष्य लीन हो जाता है। मनुष्य प्रकृति का पुतला है, प्रकृति से निर्मित है इसलिए उसके शरीर और मन, विचार और आत्मा, सभ्यता और संस्कृति, मान्यताएँ और मूल्य सबको प्रकृति प्रभावित करती है। मनुष्य और प्रकृति के बीच सामंजस्य, तालमेल शांति को उत्पन्न करता है। यह शांति ही है जिसके इर्द-गिर्द सभी मान्यताएँ, आस्थाएँ, उद्यम परिक्रमा करते रहते हैं। वास्तविक शिक्षा शांति की शिक्षा है, वह शिक्षा है जो यह सिखाती है कि मन के भीतर और बाहर किस तरह संयमित, संतुलित और शांतिप्रिय रहा जाता है। इसी तरह व्यक्ति

* *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग नयी दिल्ली-110016

की शांति उसके बाहरी वातावरण को भी शांत बनाती है जो फिर व्यक्ति के भीतर की शांति का निर्माण कर एक सकारात्मक वर्तुल का निर्माण करती है।

यह भी सत्य है कि तर्क संगत शिक्षा का अर्थ होता है–मुख्य रूप से तीन बातें। पहली, मनुष्यों को यह सिखाना कि जिन बच्चों के आधार पर उन्हें निर्णय करना है–उनका अवलोकन कैसे हो और उन्हें ठीक तरह से कैसे जानें दूसरी, उन्हें सफल रूप में भली-भाँति सोचना सिखाया जाए। तीसरी, उन्हें उनके अपने तथा व्यापक भले के लिए अपने ज्ञान और विचार का प्रभावकारी रूप से उपयोग करना सिखाया जाए। समाज की तर्कसंगत व्यवस्था की नागरिकता के लिए ज़रूरत होती है, अवलोकन और ज्ञान की क्षमता, समझ और मूल्यांकन की क्षमता, कार्य करने की क्षमता और उच्च चरित्र की क्षमता की। इन कठिन आवश्यकताओं में से किसी की भी व्यापक कमी असफलता की भावना का निश्चित स्रोत है।

इतना ही नहीं शिक्षा का कार्य व्यक्ति को इसके लिए प्रोत्साहित करना नहीं है कि वह समाज के अनुरूप बने और न ही समाज में नकारात्मक सामंजस्य ही लाना है। **शिक्षा का कार्य है–वास्तविक जीवन-मूल्यों की खोज करने में व्यक्ति की सहायता करना। इन मूल्यों की खोज के लिए आवश्यकता है-'अन्वेषण' की। परंतु पूर्वाग्रहों से रहित अन्वेषण की। साथ ही इसके लिए आवश्यक है–आत्म अवधान ।** इस संदर्भ में जे. कृष्णमूर्ति का मानना है कि यदि आत्मबोध नहीं होता तो आत्माभिव्यक्ति अंहकारमयी हो जाती है और अहंकार से युक्त इस आत्माभिव्यक्ति से फिर आक्रामक एवं महत्वाकांक्षी द्वंद्व उत्पन्न हो जाते हैं जो हमारे नाश का कारण बन जाते हैं। अत: उस 'ज्ञान' से कोई लाभ नहीं जिसका परिणाम 'नाश' की प्रक्रिया को निरंतर बनाए रखना है। वे उस संपूर्ण जीवन-प्रक्रिया को निरंतर बनाए रखने के समय–प्रश्न चिह्न लगाते हैं। जिसमें विनाश उत्पन्न करने वाले युद्ध एक के बाद एक आते-जाते हैं। यदि युद्धों की निरंतरता बनी रहती है तो यह इस बात का संकेत है कि 'हम जिस प्रकार बच्चों का पालन-पोषण कर रहे हैं उसमें कोई दोष है। वे कहते हैं कि संसार विक्षिप्त है। यह सब विक्षिप्तता है–यह लड़ाई, झगड़ा, धमकाना, एक-दूसरे को चीरना-फाड़ना। जे. कृष्णमूर्ति की दृष्टि में विश्व में सभी स्थानों में मनुष्यों को समाज में अपनी-अपनी संस्कृति के अनुरूप बनाने के लिए शिक्षित किया जा रहा है, जिससे कि वे सामाजिक और आर्थिक व्यवहार की धारा के अनुरूप हो जाएँ, हज़ारों वर्षों से जो विशाल प्रवाह है, उसकी धारा में बहने लगें। क्या वर्तमान शिक्षा यह देख सकती है कि मानव-मन इस विशाल प्रवाह में बह न जाए, नष्ट न हो जाए।' अत: वास्तविक शिक्षा का अर्थ है–'मनुष्य का मन केवल गणित, भूगोल, इतिहास आदि में ही कुशल न हो अपितु कभी भी, किसी भी दशा में भी वह समाज के प्रवाह में न बहे, क्योंकि वह धारा जिसे हम जीवन कहते हैं, वह इस समय अत्यंत भ्रष्ट है, अनैतिक है, हिंसक है, लोभी है। अत: शिक्षकों को तो इस धारा का सामना

करने वाला बनना चाहिए ताकि इसमें शांति की स्थापना हेतु कार्य-दिशा में समुचित परिवर्तन लाया जा सके।

इस प्रकार उचित शिक्षा की सार्थकता जीवन को, जीवन के अर्थ को समग्र रूप से समझने में निहित है और किसी भी समग्रता को उसके टुकड़ों के माध्यम से नहीं देखा जा सकता। **जीवन को समझने का अर्थ स्वयं अपने को समझना है, और यही शिक्षा का आरंभ और अंत दोनों है।** जीवन को बिना समन्वित रूप में समझे हमारी व्यक्तिगत तथा सामूहिक समस्याएँ और अधिक गंभीर तथा व्यापक ही होती जाएँगी। शिक्षा का लक्ष्य केवल विद्वानों, तकनीशियनों या फिर व्यवसाय की खोज करने वाले लोगों को उत्पन्न करना ही नहीं है। उसका लक्ष्य ऐसे एकीकृत स्त्री एवं पुरुष उत्पन्न करना है जो भय से मुक्त हों क्योंकि केवल ऐसे ही व्यक्तियों के बीच स्थायी शांति संभव हो सकती है। शिक्षा का कार्य कुछ परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर हमें नौकरियाँ पाने योग्य बनाना ही नहीं है, बल्कि यह समझने में हमारी मदद करना भी है कि मन किस प्रकार काम करता है। क्योंकि मन के कार्य का तरीका ही अनेक उपद्रवों का कारण है, यही अनेक युद्धों को जन्म देते हैं। हालाँकि हमारे पास पर्याप्त वैज्ञानिक जानकारी है कि जिससे कि मनुष्य की सारी ज़रूरतें पूरी की जा सकती हैं और वह शारीरिक-मानसिक रूप से स्वस्थ जीवन जी सकता है, परंतु फिर भी ऐसा जीवन असंभव बना हुआ है क्योंकि मनुष्य का समकालीन संस्कारित मन जो ईसाई, हिंदू, भारतीय, पाकिस्तानी, कम्यूनिस्ट, सोशलिस्ट, आस्तिक एवं नास्तिक आदि में बँटा हुआ है, ऐसा नहीं होने देता। अत: हमें हरेक के मन को समझना ज़रूरी है। मार्क्स के संघर्ष के सिद्धांत के अनुसार नहीं, बल्कि अपनी स्वयं की प्रज्ञा की रोशनी में समझना कि हमारा मन किस तरह कार्य करता है। यदि हम यह समझ सकें तो सबसे बड़ी क्रांति होगी ओर उस क्रांति से शांति से प्रेरित गतिविधियों का एक नया सिलसिला आरंभ हो सकेगा।

इस संदर्भ में यह प्रश्न सहज रूप से उठता है कि **शांति का वास कहाँ है? दरअसल शांति तो सभी मनुष्यों के भीतर ही होती है। शांति बाहर से आरोपित कोई वस्तु नहीं है जिसे प्राप्त करना है अथवा जिसे स्थापित करना है।** बल्कि ज़रूरत इस बात की है कि मन के भीतर वास करने वाली शांति को स्थायी रूप प्रदान किया जाए और यह तभी संभव है जब मन भयमुक्त हो। किसी प्रकार का भय, आशंका अथवा असंतोष अशांति को उत्पन्न करता है। आशंकाएँ, अथवा असंतोष की प्रकृति और कारणों में वैविध्य होता है। अंतत: ज़रूरी है कि शांति के शत्रु भय, आशंका, असंतोष को सिर उठाने ही नहीं दिया जाए। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005* में भी कहा गया है कि 'हम' अभूतपूर्व हिंसा के दौर में जी रहे हैं। इस दौर में असहिष्णुता, कट्टरवाद, विवाद और विस्वरता की निरंतर आशंकाएँ हैं। नैतिक कार्य, शांति और कल्याण कार्यों के सामने नई चुनौतियों पेश आ रही हैं। अनसुलझे विवादों से युद्ध और हिंसा पैदा होती हैं, हालाँकि

विवाद से हमेशा युद्ध और हिंसा पैदा होना आवश्यक नहीं हैं । व्यक्तियों, समूहों और राष्ट्रों के संदर्भ में विवाद को मुखर बनाकर उसे सुलझाने के लिए अहिंसात्मक उपाय ढूँढ़ने के कौशलों के पोषण की ज़रूरत है। वैश्विक, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर पर बढ़ती हिंसा के चलते राष्ट्रीय स्कूली पाठ्यचर्या के ढाँचे के इस दस्तावेज में शांति की शिक्षा का स्थान अत्यंत स्पष्ट है। शांति स्थापित करने की दीर्घकालीन प्रक्रिया में शिक्षा एक महत्वपूर्ण आयाम है। इस शांति में सहनशीलता, न्याय, अंत: सांस्कृतिक समझ और नागरिकी जिम्मेदारियाँ शामिल हैं। शिक्षा में मूल्य के रूप में शांति पाठ्यचर्या के सभी क्षेत्रों से जुड़ी हुई है और उनमें निहित मूल्यों की पूरक है और उन्हें जोड़ती है। इसलिए यह एक ऐसा सरोकार है जो पाठ्यचर्या और शिक्षक दोनों के लिए ही विचारणीय विषय बन गया है। इस चर्चा से इतना तो स्पष्ट है कि-

- **शिक्षा का वास्तविक अर्थ भली-भाँति सोचना सिखाना है।**
- **शिक्षा का कार्य है–वास्तविक जीवन-मूल्यों की खोज करने में व्यक्ति की सहायता करना।**
- **मूल्यों की खोज के लिए आवश्यकता है–अन्वेषण की।**
- **सच्ची शिक्षा वह है जो मन को समझने में हमारी मदद करे।**
- **अपनी स्वयं की प्रज्ञा की रोशनी में अपने मन को समझना होगा।**
- **शिक्षा की सार्थकता निहित है–जीवन को, जीवन के अर्थ को समग्र रूप से समझने मे।**
- **शांति सभी मनुष्यों के भीतर ही वास करती है।**
- **शिक्षा के मूल्य के रूप में 'शांति' पाठ्यचर्या के सभी-क्षेत्रों से जुड़ी हुई है।**

अत: पाठ्यचर्या के विभिन्न क्षेत्रों एवं उनसे संबधित कक्षायी अभ्यासों के माध्यम से शांति की शिक्षा का कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकता है। लेकिन इस संदर्भ में आगे बढ़ने से पहले अपनी कक्षाओं के बच्चों के बारे में भी गहराई, निष्पक्ष रूप से समझ लेना ज़रूरी है। प्राय: बच्चे जो भी सुनते है, उसमें से अधिकतर चीज़ों को समझ पाते है, लेकिन अकसर कथनी और करनी में जो अंतर होता है, उस विरोधाभास से सामंजस्य नहीं बिठा पाते। अलग-अलग आयु समूहों के लिए नैतिक विकास अलग-अलग तरह से होता है। आरंभिक वर्षों में बच्चे अपने आस-पास को समझने और उसके तथा अपने संबंध में चेतना के विकास में लगे रहते हैं। उनका व्यवहार सज़ा से बचने और पुरस्कार प्राप्त करने के प्रति होता है। वे अच्छे-बुरे का अंदाज़ा इससे लगाते हैं कि कौन-सी बात मानी गई, कौन-सी नहीं। इस स्तर पर, वे बड़ों में जो देखते है उसी के अनुरूप नैतिक मूल्यों की अपनी समझ बनाते हैं। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, उनकी तार्किक क्षमताओं का तो विकास काफ़ी हद तक होता है, फिर भी वे इतने परिपक्व नहीं हो पाते कि

मान्यताओं और मानकों पर प्रश्न खड़े कर सकें। बाद में उनमें अमूर्त चिंतन का पूरी तरह विकास हो जाता है, तो वे तार्किक ढंग से बता पाते हैं कि नैतिक आचरण क्या होता है। वे नियमों के अनुरूप काम करते हैं और जानते हैं कि संपूर्ण शांति बनाए रखने में इन मूल्यों का क्या योगदान है। शांति की शिक्षा के लिए बच्चों के मानसिक स्तर और समाज में विद्यमान मूर्त, अमूर्त, चीज़ों, भावनाओं, संवेगों के प्रति उनकी अपनी समझ को ध्यान में रखना होगा।

जहाँ तक शांति की शिक्षा और कक्षायी अभ्यासों के आपसी संबंधों का सवाल है तो कहा जा सकता है कि वस्तुत: कक्षायी अभ्यासों में शांति की शिक्षा की भरपूर गुजांइश होती है जहाँ शिक्षक, शिक्षार्थी, और संपूर्ण शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया मिलकर इस दिशा में कार्य कर सकते हैं। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तकें इनसे अछूती नहीं हैं।

आइए, अब यह जानने का प्रयास करें कि विषय क्षेत्रों से जुड़े कक्षायी अभ्यास किस प्रकार शांति की शिक्षा को बढ़ावा देते हैं। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित हिंदी की पाठ्यपुस्तक **'आरोह'** (**कक्षा 12**) में दी गई रज़िया सज्जाद ज़हीर की कहानी **'नमक'** का यह अंश पढ़िए–

'कीर्तन कोई ग्यारह बजे खत्म हुआ' जब वे प्रसाद हाथ में लिए उठने लगीं और साफ़िया के सवाल के जवाब में दुआएँ देती हुई रुखसत होने लगीं तब साफ़िया ने धीमे से पूछा, "आप लाहौर से कोई सौगात चाहें तो मुझे हुक्म दीजिए।"

वे दरवाज़े से लगी खड़ी रहीं। हिचकिचाकर बहुत ही अहिस्ता से बोलीं, ''अगर ला सको तो थोड़ा-सा लाहौरी नमक लाना।''

जब उसका सामान कस्टम जाँच के लिए बाहर निकाला जाने लगा तो उसे एक झिरझिरी-सी आई और एकदम से उसने फैसला किया कि मुहब्बत का यह तोहफा चोरी से नहीं जाएगा, नमक कस्टमवालों को दिखाएगी वह। उसने जल्दी से पुड़िया निकाली और हैंडबैग में रख ली।

साफ़िया ने हैंडबैग मेज़ पर रख दिया और नमक की पुड़िया निकालकर उनके सामने रख दी और फिर आहिस्ता-आहिस्ता रुक-रुक कर उनको सब कुछ बता दिया।

उन्होंने पुड़िया को धीरे-से अपनी तरफ़ सरकाना शुरू किया। जब साफ़िया की बात खत्म हो गई तब उन्होंने पुड़िया को दोनों हाथों में उठाया, अच्छी तरह लपेटा और खुद साफ़िया के बैग में रख दिया। बैग साफ़िया को देते हुए बोला–''मुहब्बत तो कस्टम से इस तरह से गुज़र जाती है कि कानून हैरान रह जाता है।''

वह चलने लगीं तो वे भी खड़े हो गए और कहने लगे, ''जामा मस्ज़िद की सीढ़ियों को मेरा सलाम कहिएगा और उन खातून को यह नमक देते वक्त मेरी तरफ़ से कहिएगा कि लाहौर अभी तक उनका वतन है और देहली मेरा, तो बाकी सब रफ्ता-रफ्ता ठीक हो जाएगा।"

जब साफ़िया अमृतसर के पुल पर चढ़

रही थी तब पुल की सबसे निचली सीढ़ी के पास वे सिर झुकाए चुपचाप खड़े थे। साफ़िया सोचती जा रही थी किसका वतन कहाँ है-वह जो कस्टम के इस तरफ़ है या उस तरफ़।

कक्षा में बच्चों के साथ इस कहानी पर आधाारित चर्चा, सवाल-जवाब का कार्य इस प्रकार करवाया जा सकता है–

- नमक की पुड़िया ले जाने के संबंध में साफ़िया के मन में क्या द्वंद्व था?
- जब साफ़िया अमृतसर पुल पर चढ़ रही थी तो कस्टम ऑफिसर निचली सीढ़ी के पास सिर झुकाए चुपचाप क्यों खड़े थे?
- लाहौर अभी तक उनका वतन है और देहली मेरा यह उद्‌गार किस सामाजिक यथार्थ का संकेत करता है?
- मानचित्र पर एक लकीर खींच देने भर से ज़मीन और जनता बँट नहीं जाती है–उचित तर्कों और उदाहरणों के ज़रिए इसकी पुष्टि करें।
- नमक कहानी में भारत और पाक की जनता के आरोपित भेदभावों के बीच मुहब्बत का नमकीन स्वाद घुला हुआ है, कैसे?
- 'नमक' कहानी में हिंदुस्तान-पाकिस्तान में रहने वाले लोगों की भावनाओं, संवेदनाओं को उभारा गया है। वर्तमान संदर्भ में इन संवेदनाओं की स्थिति को तर्क सहित स्पष्ट कीजिए।
- साफ़िया की मन:स्थिति को कहानी में एक विशिष्ट संदर्भ में अलग तरह से स्पष्ट किया गया है। अगर आप साफ़िया की जगह होते तो क्या आपकी मन:स्थिति भी वैसी ही होती? स्पष्ट कीजिए।
- भारत-पाकिस्तान के आपसी संबंध को सुधारने के लिए दोनों सरकारें प्रयासरत हैं। व्यक्तिगत तौर पर आप इसमें क्या योगदान दे सकते/सकती हैं?
- विभाजन के अनेक स्वरूपों में बँटी जनता को मिलाने की अनेक भूमियाँ हो सकती हैं–रक्त संबंध, विज्ञान, साहित्य और कला। इनमें से कौन-सबसे ताकतवर हैं और क्यों?

क्यों कहा गया कि–

- मुहब्बत तो कस्टम से इस तरह गुज़र जाती है कि कानून हैरान रह जाता है।
- किसका वतन कहाँ है–वह जो कस्टम के इस तरफ़ है या उस तरफ़।

बच्चों द्वारा दिए गए जवाब अथवा प्रतिक्रियाएँ नि:संदेह रूप से किसी भी एक मुद्दे को कई दृष्टिकोणों से देखने के बाद और विश्लेषण के उपरांत ही उभरी होंगी। इस प्रकार अन्य विषयों के अध्ययन-अध्यापन के दौरान **'शांति वार्ता'** को कक्षायी अभ्यासों में स्थान दिया जा सकता है।

शांति की शिक्षा की विधियाँ–सवालों के दायरे में

शांति की शिक्षा से जुड़ी प्राय: तीन प्रकार

के उपागमों का कक्षा में क्रियांवयन किया जाता है

- **प्रत्यक्ष उपागम अथवा प्रत्यक्ष शिक्षण शास्त्रीय निवेश**
- **समेकित संगामी उपागम**
- **आलोचनात्मक परिपृच्छा उपागम**
- **पूर्ण परिवेशीय उपागम**

प्रत्यक्ष उपागम

शांति की शिक्षा पहला उपागम जो प्रत्यक्ष शिक्षण शास्त्रीय सिद्धांतों का अनुपालन करता है–इस मान्यता पर आधारित है कि यदि शांति की क्रिया अथवा शांति के लिए शिक्षा का कार्य रहता है तो उसका शिक्षण प्रत्यक्ष रूप से किया जाना चाहिए। यह उपागम कहीं-न-कहीं उपदेशात्मक तरीकों पर अवलंबित है जहाँ हम सीधे-सीधे बच्चों के साथ यह चर्चा करते हैं कि 'शांति' क्या है, 'शांति' क्यों ज़रूरी है और शांति नामक मूल्य को कैसे स्थापित किया जा सकता है। यह उपागम संभवत: करो या न करो (Do's or don't) की एक सूची के अनुसार कार्य करने के लिए बच्चों को प्रेरित करता होगा। यह उपागम अपने प्रत्यक्ष शिक्षण के लिए 'प्राय:' निम्नलिखित तौर-तरीकों को अपनाता है–

- **व्याख्यान**
- **चर्चाएँ**
- **कहानियाँ**
- **चिंतनपरक अभ्यास**
- **नाटकीकरण**

प्रत्यक्ष उपागम प्राय: छोटी कक्षाओं में और/संप्रेषण में सामान्य रूप से उपयोग में लाई जाने वाली तकनीकों का प्रयोग करता है।

समेकित संगामी उपागम

शांति की शिक्षा का यह उपागम इस मान्यता पर आधारित है कि 'शांति' नामक मूल्य के विकास के लिए पृथक् कक्षाओं की आवश्यकता नहीं है और न ही प्रत्यक्ष शिक्षण की बल्कि पाठ्यचर्या के विषय-क्षेत्रों की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के ताने-बाने में ही शांति की शिक्षा को बुना जाना चाहिए। चूँकि 'शांति' जैसा मूल्य मनुष्य के भीतर ही वास करता है अत: उसे विषयों के प्रभावी शिक्षण के समय उद्दीप्त करना चाहिए। बच्चे भाषा, विज्ञान, भूगोल, गणित को पढ़ते समय इस शांति को भी आत्मसात करते चलें।

यह उपागम पाँच चरणों में कार्य करता है–

- **सीखने का संदर्भ**–इसमें बच्चे से जुड़े तमाम, परिप्रेक्ष्य कार्य करते हैं जिससे सीखने की प्रक्रिया को सार्थक बनाया जा सकता है। इसमें निम्न बिंदु शामिल हैं-
  - **पूर्व अर्जित संकल्पनाएँ**
  - **बच्चे के जीवन का वास्तविक संदर्भ, जैसे–परिवार, विद्यालय आदि**
  - **समाज, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ**
  - **सांस्थानिक संदर्भ,** जैसे–विद्यालयी वातावरण

- **सीखने संबंधी अनुभव**–हम सभी जानते हैं कि सीखने से जुड़े अनुभव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के होते हैं। अप्रत्यक्ष अनुभवों में बच्चे के संज्ञान पक्ष का अधिक समावेश होता है। जबकि प्रत्यक्ष अनुभवों में संज्ञान के अतिरिक्त संवेग पक्ष भी शामिल होता है। यह उपागम निम्न तकनीकों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभवों पर बल देता है–
  - **भूमिका निर्वाह**
  - **वास्तविक जीवन के उदाहरण**
  - **परिस्थितिक खेल**
  - **गतिविधियाँ**

चिंतन–चिंतन वह प्रक्रिया है जिसमें हम सीखने संबंधी अनुभवों का अर्थ प्राप्त करते है। इस संदर्भ में शिक्षक का कार्य यह है कि वह वास्तविक अनुभवों पर चिंतन करवाते हुए कार्य (एक्शन) की ओर अग्रसर हो। यह कार्य दरअसल एक प्रकार से क्रियान्वयन, अनुप्रयोग है जो बच्चों की अभिवृत्ति और व्यवहार में प्रदर्शित होगा।

कार्य–यह आंतरिक और बाह्य व्यवहार में संशोधन से जुड़ा है। उदाहरण के लिए 'पहले स्वतंत्रता संग्राम' पर चर्चा करते हुए शांति देश भक्ति, राष्ट्रीय एकता आदि मूल्यों को विकसित किया जा सकता है।

मूल्यांकन–यह बच्चे के व्यक्तित्व का सर्वांग रूप से मूल्यांकन का चरण है। जिसमें संज्ञानात्मक और सह-संज्ञानात्मक मूल्यांकन शामिल हैं। यह वह चरण है जहाँ इस बिंदु का मूल्यांकन होता है कि बच्चे ने 'शांति' नामक मूल्य को किस प्रकार और किस सीमा तक आत्मसात किया है।

आलोचनात्मक परिपृच्छा उपागम

यह उपागम संदर्भों द्वारा समस्याओं को सुलझाने हेतु बच्चे द्वारा खोजबीन, जाँच-पड़ताल से जुड़ा है। इसमें बच्चे शिक्षण की सहायता से चीज़ों, स्थितियों को स्वयं अपनाते हैं न कि किसी पथ का अंधानुकरण करते हैं। यह उपागम इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि इसमें समस्या की आलोचनात्मक जागरूकता, तर्कणा, चिंतन आदि अनेक मानसिक सक्रियाएँ शामिल हैं। इस उपागम के अंतर्गत बच्चों के सामने कोई समस्या, स्थिति, जो वास्तविक जीवन से जुड़ी हो रखते हुए उनके विचारों को आमंत्रित किया जाता है। उदाहरण के लिए 'पड़ोसी देशों' से मधुर संबंध कैसे बनाए जाएँ अथवा समाज देश मे 'व्याप्त आंतकी खतरों का क्या समाधान है' आदि विषय देकर उनसे विचार विमर्श, चिंतन करवाया जा सकता है। यह उपागम निम्नलिखित तकनीकों के उपयोग पर बल देता है–

अनुरूपण प्रतिमान–इसमें किन्हीं छद्म स्थितियों में अपने ही व्यवहार के परिणामों का विश्लेषण का कार्य करवाया जाता है। विश्लेषण के उपरांत बच्चे स्वयं अपने अवांछनीय व्यवहार को परिमार्जित, परिष्कृत करते हैं।

न्यायशास्त्रीय परिपृच्छा प्रतिमान–जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि इसमें, न्यायालय की भाँति किसी मुद्दे पर बहस की जाती है, उस पर पक्ष एवं विपक्ष के तर्क सुने जाते हैं और तब

निर्णय लिया जाता है। इस प्रतिमान में किसी समस्या विशेष के बारे में पक्ष एवं विपक्ष संवाद होते हैं। एक ही समस्या को कई दृष्टिकोणों से तर्क संगत रूप से देखने का प्रयास किया जाता है। तब बच्चे समूचे रूप से चीज़ों, स्थितियों, समस्याओं का विश्लेषण कर स्वयं निर्णय लेते हैं, उदाहरण के लिए आतंकवाद से निपटने के लिए भारत को कौन-सी नीति अपनानी चाहिए– युद्ध और शांति? बच्चों से कहा जाए कि वे इस पर अपने-अपने विचार और तर्क प्रस्तुत करें।

मूल्य विश्लेषण प्रतिमान–इसमें बच्चों के सामने एक समस्या, मुद्दा प्रस्तुत किया जाता है और उनसे कहा जाता है कि वे इसमें निहित मूल्यों की पहचान करें, उन पर चर्चा करें, उनका मूल्यांकन करें और तब एक वांछनीय, नैतिक और सर्वाधिक तर्क संगत निर्णय पर पहुँचे। यह प्रतिमान शांति, उससे जुड़े मुद्दों और उससे जुड़ी नैतिक जिम्मेदारियों के बारे में निर्णय लेने के लिए बच्चों में तर्क शक्ति, मूल्य-निर्णय और मूल्य स्पष्टीकरण कुशलताओं का विकास करता है। वस्तुतः यह प्रतिमान शांति को भंग करने वाले द्वंद्वों के बारे में तर्कपूर्ण ढंग से विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

पूर्ण परिवेशीय उपागम

इस उपागम को अप्रत्यक्ष उपागम भी कहा जा सकता है जिसमें शांति की शिक्षा के लिए पूरे विद्यालयी वातावरण को शांतिपूर्ण बनाना ज़रूरी है। जिससे बच्चे अपनी अवलोकन क्षमता द्वारा 'शांति' नामक मूल्य को ग्रहण कर सकते हैं।

इसके अतिरिक्त शांति क्लब तथा अन्य पाठ्यचर्या सहगामी क्रियाएँ भी शांति की शिक्षा के लिए उपयोगी हो सकती हैं। अतः यह ज़रूरी है कि शांति की शिक्षा एक ऐसे सरोकार के रूप में विकसित हो जो समूचे स्कूली जीवन पर छा जाए–पाठ्यचर्या, कक्षा का वातावरण, स्कूल प्रबंधन, शिक्षक-शिक्षार्थी संबंध और स्कूल से जुड़ी तमाम गतिविधियाँ । अतः यह आवश्यक है कि पाठ्यचर्या, परीक्षा का इस दृष्टि से मूल्यांकन हो कि कहीं ये बच्चे में अपर्याप्तता, असंतोष, निराशा, भय, असुरक्षा आदि भावों को बढ़ावा तो नहीं दे रहे। विभिन्न संचार माध्यमों से बच्चों के मन पर पड़ने वाली हिंसात्मक ओर नकारात्मक छाप को भी रोकना होगा।

शांति निश्चित ही कोई प्रतिक्रिया नहीं है जो किसी विशिष्ट प्रणाली अथवा समाज के विशिष्ट संगठन या विशिष्ट विचारधाराओं या कार्यों आदि के विरुद्ध होती हो, शांति इन सबसे बिल्कुल भिन्न है। यह निःसंदेह तभी आ सकती है जब मानव को संपूर्ण प्रक्रिया को यानी अपने आप को समूचे रूप में समझ लिया जाता है। इस प्रकार का स्व-ज्ञान न तो पुस्तक में पाया जा सकता है और न ही इसे किसी दूसरे से सीखा जा सकता है। जब हमारे हृदय में प्रेम होता है और जब हम अपने जीवन के हर क्षण में स्वयं का निरीक्षण करते हैं एवं अपने आपको समझने लगते हैं, तो सत्य प्रकट होता है और उस सत्य से

शांति का आगमन होता है। अपने आपको समझने और सत्य के उद्घाटन के लिए चर्चा, विचार-विमर्श, सुविचारित चिंतन, तर्कणा की आवश्यकता है, कोरे उपदेश शांति के पथ को अग्रसर नहीं कर सकते। अच्छा साहित्य जो 'शांति' नामक मूल्य को बढ़ाता है, पत्र-पत्रिकाएँ, समाचार-पत्र और विशेषत: उनकी भाषा पर ध्यान देना ज़रूरी है। आशावादी और सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास भी शांतिमय पहल हो सकती है। इस संदर्भ में ओशो का मानना है कि बच्चों को ऐसी शिक्षा दी जाए तो सार्थक हो। वास्तविक शिक्षा केवल बुद्धि का प्रशिक्षण ही नहीं सिखाएगी, इससे हमें अच्छी आजीविका तो मिल सकती है, लेकिन अच्छा जीवन नहीं। हृदय आधारित शिक्षा हमें अच्छी आजीविका तो नहीं दे सकती लेकिन एक अच्छा जीवन दे सकती है और इन दोनों के बीच चुनाव करने का कोई कारण नहीं है। बुद्धि का उन बातों में उपयोग करो जिनके लिए वह बनी है और हृदय का उन बातों के लिए जिनके लिए वह बना है। हृदय द्वैत का अतिक्रमण है।